आर.एन.आई-संख्या : DELHIN/2007/23260
पोस्टल रजि. संख्या : DL (N) 06/213/11-13
प्रकाशन की तिथि–2 दिसम्बर 2013

सृष्टि संवत्- 1, 96, 08, 53, 114
युगाब्द-5114, अंक-78-66, वर्ष-7,
मार्गशीर्ष, कृष्ण पक्ष, दिसम्बर-2013
शुल्क- 5/ रुपये प्रति, द्विवार्षिक शुल्क-100/ रुपये
डाक प्रेषण तिथि : 5-6दिसम्बर, कुल पृष्ठ-8

प्रेषक : सम्पादक, कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
आर्ष गुरुकुल, टटेसर जौन्ती, दिल्ली-81

महर्षि दयानन्द सरस्वती

ओ३म्

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com सम्पर्क सूत्रः 9350945482 Web: www.aryanirmatrisabha.com

संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य' सह-संपादक : आचार्य सतीश

न यस्य द्यावापृथिवी अनु व्यचोन सिन्धवो रजसो अन्तमानशुः। नोत स्ववृष्टिं मदे अस्य युध्यत एको अन्यच्चकृषे विश्वमानुषक॥ –ऋ० १।४।१४।४

व्याख्यान–हे परमैश्वर्ययुक्तश्वर! आप इन्द्र हो। हे मनुष्यो! **"न यस्य द्यावापृथिवी अन्तमानशुः"** 'जिस परमात्मा का अन्त-इतना यह है', न हो, उसकी व्याप्ति का परिच्छेद (इयत्ता) परिमाण कोई नहीं कर सकता तथा दिवे अर्थात् सूर्यादिलोक-सर्वोपरि आकाश तथा मध्य=निकृष्टलोक-ये कोई उसके आदि-अन्त को नहीं पाते, क्योंकि **"अनुव्यचः"** वह सबके बीच में अनुस्यूत (परिपूर्ण) हो रहा है तथा **"न सिन्धवः"** अन्तरिक्ष में जो दिव्य जल तथा **"रजसः"** सब लोक सो भी उसका अन्त नहीं पा सकते **"नोत स्ववृष्टिं मदे"** वृष्टिप्रहार से युद्ध करता हुआ वृत्र (मेघ) तथा बिजली-गर्जन आदि भी ईश्वर का पार नहीं पा सकते।* हे परमात्मन्! आपका पार कौन पा सके? क्योंकि **"एकः"** एक अपने से भिन्न सहायरहित स्वसामर्थ्य से ही **"विश्वम्"** सब जगत् को **"आनुषक्"** आनुषक्त, अर्थात् उसमें व्याप्त होते और **"चकृषे"** (कृतवान्) आपने ही उत्पन्न किया है, फिर जगत् के पदार्थ आपका पार कैसे पा सकें तथा **"अन्यत्"** आप जगद्रूप कभी नहीं बनते, न अपने में से जगत् को रचते हो, किन्तु अनन्त अपने सामर्थ्य से ही जगत् का रचना, धारण और लय यथाकाल में करते हो, इससे आपका सहाय हम लोगों को सदैव है॥

सम्पादकीय

देश को नेता चाहिए.....

देश के पाँच राज्यों दिल्ली, राजस्थान, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ व मिजोरम में निर्वाचन सम्पन्न हो चुका है, और राष्ट्र के भाग्य का पंचवर्षीय निर्धारण करने हेतु अब पाँच पास का समय रह गया है, संग्राम थम गया है, परिणाम हमारे समक्ष है, और इसी के साथ महासंग्राम का शंखनाद हो गया है, लेकिन दुर्भाग्य है कि देश में एक भी नेता नहीं है, जो इस देश के निवासियों को विश्वास पूर्वक प्रामाणिकता के साथ कोई सत्य विचार दे सके। देश की वर्त्तमान परिस्थिति का ठीक-ठीक बोध करा सके, और उज्ज्वल भविष्य के प्रति किंचित् भी आश्वस्त कर सके, कि-जिससे एक सौ इक्कीस करोड़ की विशाल जनसंख्या वाले निराशा के गर्त में खड़े इस देश को कुछ आशा की किरण दिखाई दे, थोड़ा सा तो आश्वासन मिले कि-अब देश में धर्म (कर्तव्यनिष्ठा) पूर्वक शासन व्यवस्था चलेगी। अर्थ अर्थात् धन से हीन (गरीब) जीवन किसी को नहीं बिताना पड़ेगा, देश के समस्त नागरिकों की सर्वहितकारी, कल्याण-कारी इच्छाओं की पूर्ति होगी, और देश में हम ऐसी सुरक्षा व्यवस्था बनायेंगे, जिससे मुठ्ठीभर लोग ही सही, इस जन्म-मरण के चक्र से छूटने का प्रयत्न कर सकेंगे, अर्थात् मोक्ष की कामना करते हुए जीवन में ईश्वरीय चिन्तन-मनन, साधना-उपासना कर सकेंगे।

आर्यों! आर्याओ! आर्यवंशजो! यही तो शासक का कर्तव्य होता है, जिसको हम राजा कहते हैं, अथवा वर्तमान में नेता कह लीजिए। नेता शब्द का अर्थ है-ले जाने वाला। उन्नति की ओर, विकास की ओर, सुव्यवस्था की ओर, सुरक्षा की ओर, सत्य की ओर, ज्ञान की ओर, और बन्धन से मुक्ति की ओर। क्या ऐसा नेता है? कहीं भी कोई भी दिखाई दे रहा है? नहीं। फिर भी जनता में नेताओं की कोई कमी नहीं है, स्वाधीनता के संघर्षकाल में देशवासियों ने परतन्त्रता से स्वतन्त्रता की ओर ले चलने में सक्षम दिखाई देने वाले एक सुभाषचन्द्र वसु (बोस) के साथ बड़े आदर से इस शब्द को जोड़ा था, और उन्होंने भी इसे सार्थक करने का प्रयास पूरी निष्ठा के साथ किया, लेकिन वर्त्तमान में यदि हम देखें, तो उत्तर प्रदेश सरकार के स्वामी एक व्यक्ति को लोग 'नेता जी' नाम से सम्बोंधित करते हैं, और चुनाव का मौसम हो, तो फिर क्या? गली-गली में यह शब्द सुनाई देता है, किन्तु उनकी चर्चा तो छोड़िये, तनिक राष्ट्रीय स्तर पर तो विवेक विचार कीजिए-पाँच राज्यों के निर्वाचन हेतु राष्ट्रीय दलों (पार्टियों) के जो सितारे (स्टार) प्रचारक थे, किंचित उनके वक्तव्यों पर तो ध्यान दीजिए-कैसा शून्य दिखाई देता है, कैसी निराशा उत्पन्न होती है, लगता है जैसे-इन्हीं नेताओं के बनाये निर्वाचन आयोग ने इस लोकसभा चुनाव में 'कोई नहीं' का बटन बनाकर कुछ लोगों पर बड़ा उपकार कर दिया हो,

शेष अगले पृष्ठ पर

सम्पादकीय का शेष.....

किन्तु यह उपकार नहीं, हमारे पतन की पराकाष्ठा है कि-हम इतने निराश और हताश अवस्था में पहुँच चुके हैं। पुनरपि यहाँ तक पहुँचाने के उत्तरदायी तो हमारे नेता ही हैं, जो पचास-पचास वर्षों तक सत्ता में पीढ़ी दर पीढ़ी रहते हुए भी अपने पूर्वजों का गौरवगान करना अपना अधिकार समझते हैं, तो दूसरी ओर उन्हीं पूर्वजों की बनायी रीति और नीति से वोट के लिए विद्रोही स्वरूप में दिखने का छलपूर्ण प्रयास भी करते हैं। पचास वर्षों तक शासन करने के बाद भी ये निर्लज्ज होकर यह कहते नहीं चूकते कि-मुद्दा विकास है। प्रश्न उठता है-फिर पचास वर्ष तक आपके पूर्वजों ने क्या किया? क्या मात्र छल, कपट, और सत्ता पर बने रहने हेतु साजिशें और इन पचास वर्षों में दश वर्ष तो आपने डींगे मारते-मारते देश को निराशा के गर्त में ही धकेल दिया, सो अब कौन सा चमत्कार कर सकते हो? कुछ नेता ऐसे हैं-जो समाजवाद, लोहियावाद की उपज हैं, लेकिन इन्हें समाज के नाम पर मात्र मुस्लिम समाज ही दिखाई देता है, इन्हें चिन्ता सिर्फ अल्पसंख्यकों के वोटों की है। इन्हें भी समाजवाद में कम वंशवाद में विश्वास अधिक है। एक और दिशा में कम्यूनिस्ट हैं, जो इस देश के जीवनमूल्यों से, परम्पराओं से विवेकशून्य होकर घृणा करते हैं। चौथी ओर वे नेता है, जो इस देश की परम्पराओं के नाम पर कुपरम्पराओं, अन्धविश्वासों, पाखण्डों और आडम्बरों को ही बढ़ाकर सत्ता प्राप्त कर रहे हैं, और सत्ता में बने रहना चाहते हैं, लेकिन न इतिहास से सीखना चाहते हैं, और न भविष्य को यथार्थदृष्टि से देखना चाहते हैं। झूठे सपनों के बल पर आखिर जनता कहाँ तक विश्वास करे। रही बात अभद्र भाषा, असत्य वक्तव्य, झूठा इतिहास, झूठे तथ्य और झूठे आश्वासनों की, तो इन पर सभी का समान अधिकार भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार की तरह हो गया है।

ऐसी विषम परिस्थिति में एक आर्य, आर्या क्या करे? किस ओर जाय? किस उपाय का आश्रय ले? समझना अत्यन्त कठिन हो जाता है, तब अपने घर अर्थात् आर्यसमाजरूपी संगठन की ओर देखता है, और उसे यहाँ दिखाई देते हैं कि चिन्ता-चिन्तन करने वाले महान लेखक हैं, वक्ता है, अन्यत्र से श्रेष्ठ विद्वान् भी हैं, बड़े-बड़े संस्थान हैं, गुरुकुल हैं, आश्रम हैं, प्रान्तीय सभायें हैं, सार्वदेशिक संगठन है, और ऋषि के उत्तराधिकारी का द्योष भी है। आर्य, आर्या में आशा की, उत्साह की लहर उठती है, कोई किरण दिखती है, वह इन सभी के निकट जाकर देखने का प्रयास करता है, थोड़ा गम्भीर होकर समझने की चेष्टा करता है, और तब उसे साक्षात् होता है, उस भयानक किन्तु वास्तविक सच्चाई का, जिसे लिखने की आवश्यकता अभी नहीं है। अतः हम पुनः आह्वान करते हैं-आर्य नेताओं से, आर्य विद्वानों से, आर्य सम्पादकों से, लेखकों से, विचारकों से, संस्थाओं के, गुरुकुलों के आचार्यों से, संचालकों से, सभाओं के अधिकारियों से, और अन्त में प्रत्येक आर्य से, आर्या से। आइए, मिलकर संगठित होकर निदान कीजिए। और इस सनातन-पुरातन राष्ट्र को नेता दीजिए, हाँ जी नेता और वह भी सामान्य नहीं आर्य नेता दीजिए। जिससे निराशा छंटे, शून्य समाप्त हो, और भविष्य में राष्ट्र की उन्नति की आशा की जा सके। हमें विश्वास है, हम सभी ऐसा करेंगे, अवश्य करेंगे, क्योंकि-यह हमारी आर्यों की, आर्याओं की और राष्ट्र की विवशता है। और हम उत्तरायित्व से मुँह नहीं मोड़ सकते। यही तो ऋषिवर दयानन्द की आकांक्षा है, और उनसे पूर्व के सभी ऋषियों की भी आकांक्षा है। तो फिर आइए और मिलकर पूर्ण कीजिए। "इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः"।।

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा की मासिक गतिविधियाँ

बिना सिद्धांतों को समझे, उन्हें धारण किए मनुष्य का निर्माण नहीं होता है। राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा निरन्तर वेद द्वारा प्रतिपादित और ऋषि दयानन्द द्वारा व्याख्यायित सिद्धांतों के माध्यम से निर्माण कार्य में संलग्न है। विगत् माह भी महिला व पुरुषों के लिए निम्न आर्य / आर्या निर्माण सत्र लगाए गए।

आर्य प्रशिक्षण सत्र

	स्थान	दिनांक
1.	गांव-गंगोला, गौतमबुद्ध नगर, उ॰ प्र॰	09-10 नव॰
2.	शहीद इकबाल सिंह जू॰ हाईस्कूल,शेरपुरावारा,बागपत	09-10 नव॰
3.	राठौर धर्मशाला, गुंजशोर, भोपाल, म॰ प्र॰	09-10 नव॰
4.	आर्यसमाज, चरथावल, मुजफ्फरनगर, उ॰ प्र॰	09-10 नव॰
5.	ठाकुरजी का मंदिर, गांव-खोल, नारनौल, हरियाणा	16-17 नव॰
6.	आर्यसमाज, विशाखा इंकलेव, पीतमपुरा, दिल्ली	23-24 नव॰
7.	आचार्य महाविद्यालय, चितौड़ाझाल,मुजफ्फरनगर, उ॰प्र॰	23-24 नव॰
8.	आर्यसमाज टिबरा रोड़ मोदीनगर, गाजियाबाद, उ॰प्र॰	23-24 नव॰
9.	संस्कार विद्यापीठ, टीकरी बागपत, उ॰ प्र॰	23-24 नव॰
10.	बाबा न्याराम दास हाई स्कूल,रावलधी, भिवानी हरि॰	23-24 नव॰
11.	डी.ए.वी. इन्टर कॉलेज, जामपुर, बिजनौर, उ.प्र.	30नव.-1दिस.
12.	आर्यसमाज, दादुपुर, करनाल, हरियाणा	30नव.-1दिस.
13.	आर्यसमाज गांव तलाव, झज्जर, हरियाणा	30नव.-1दिस.

आर्या प्रशिक्षण सत्र.

1.	एम. डी. मा. विद्यालय गांव-जड़वड़, मुजफ्फनगर,उ॰प्र॰	09-10 नव॰
2.	आर्यसमाज, सेक्टर-11, हुडा, पानीपत, हरियाणा	09-10 नव॰

संतानों और शिष्यों की शिक्षा

अहोभाग्य उस मनुष्य का है कि जिसका जन्म धार्मिक, विद्वान् माता-पिता और आचार्य के सम्बन्ध में हो, क्योंकि इन तीनों की ही शिक्षा से उत्तम मनुष्य होता है। ये अपने सन्तान और विद्यार्थियों को अच्छी भाषा बोलने, खाने-पीने, बैठने-उठने, वस्त्र धारणे, माता आदि का मान्य करने, उनके सामने यथेष्टाचारी न होने, विरुद्ध चेष्टा न करने आदि के लिए प्रयत्न से नित्यप्रति उपदेश किया करें और जैसा-जैसा उसका सामर्थ्य बढ़ता जाए वैसे-वैसे उत्तम बातें सिखलाते जाएँ।..... और जो अपने-अपने सन्तान और शिष्यों को ईश्वर की उपासना, धर्म-अधर्म, प्रमाण-प्रमेय, सत्य, मिथ्या, पाखण्ड, वेद, शास्त्र आदि के लक्ष्ण और उनके स्वरूप का यथावत् बोध करा और सामर्थ्य के अनुकूल उनको वेदशस्त्रों के वचन भी कण्ठस्थ कराकर विद्या पढ़ने, आचार्य के अनुकूल रहने की रीति भी जना देवें कि जिससे विद्याप्राप्ति आदि प्रयोजन निर्विघ्न सिद्ध हों, वे ही माता-पिता और आचार्य कहाते हैं।

-व्यवहारभानु, ऋषि दयानन्द

मार्गशीर्ष मास, हेमन्त ऋतु, कलि-5114, वि. 2070
(18 नवम्बर से 17 दिसम्बर 2013)
प्रातः कालः 6 बजकर 15 मिनट से (6.15 A.M.)
सायं कालः 6 बजकर 00 मिनट से (6.00 P.M.)

संध्या काल

पौष मास, शिशिर ऋतु, कलि-5114, वि. 2070
(18 दिसम्बर 2013 से 16 जनवरी 2014)
प्रातः कालः 5 बजकर 45 मिनट से (5.45 A.M.)
सांय कालः 6 बजकर 45 मिनट से (6.45 P.M.)

भाषा शैली व शब्दों का चयन

-आचार्य सतीश,दिल्ली

पिछले दिनों देश के चुनावी वातावरण में यह चर्चा का विषय रहा कि देश के शीर्ष नेता भी मर्यादित भाषा का प्रयोग नहीं कर रहे हैं और भाषा का स्तर तथा शब्दों का चयन बहुत निचले स्तर पर चला गया है। यहाँ हम उन नेताओं के विषय में चर्चा नहीं कर रहे हैं और न ही हमारा उद्देश्य राजनैतिक चर्चा का है अपितु सामाजिक स्तर पर क्या हो रहा है और किस प्रकार वही प्रभाव प्रत्येक क्षेत्र में पड़ रहा है यही हमारा मुख्य उद्देश्य है।

आइए विचार करते हैं कि सामाजिक स्तर पर आज भाषा शैली व शब्दों का चयन जो लोग करते हैं वह क्या है? आज चाहे हम किसी गाँव की चौपाल व बैठक में हों, शहर के गली मुहल्ले में, किसी कस्बे के छोटे से सरकारी दफ्तर में, मल्टीनेशनल कम्पनी के पार्श्व-कार्यालय में, कोर्ट कचहरी में, पुलिस थाने में, बस में मित्र मण्डली की बातचीत हो, ट्रेन में दैनिक यात्रियों की चर्चा हो या अन्य कोई स्थान, अनौपचारिक चर्चा का स्तर व उसमें शब्दों का चयन अधिकांश में उस निचले स्तर का होता है कि उसको किसी भी रूप में मान्य नहीं किया जा सकता है और न ही वह सभ्यता की श्रेणी में आता है। बात-बात में अपशब्दों (गाली-गलौच)का प्रयोग, एक-दूसरे के प्रति असम्मान का भाव या चर्चा मात्र व्यक्तिगत स्तर तक ही होकर रह जाती है। अगर हम अपने इस भौगोलिक क्षेत्र में देखें तो यहाँ तो स्थिति अत्यन्त दयनीय है। सामान्य बातचीत में भी लोग ऐसे-ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं कि किसी अन्य परिस्थिति में वही शब्द खून-खराबे का कारण बन जाते हैं। व्यक्ति के द्वारा प्रयुक्त किए गये शब्द उसकी मानसिकता व विचार धारा को प्रदर्शित करते हैं। दूसरी ओर जब इन शब्दों को समाजिक मान्यता मिलती चली जाती है, जैसा कि आज अधिकांशत: हो रहा है तो उसके दुष्परिणामों पर समाज में विचार करना ही बन्द हो जाता है। उसको कुछ हद तक सामाजिक मान्यता भले ही प्राप्त हो जाए लेकिन वह व्यक्ति की मानसिकता व विचार शैली पर प्रभाव अवश्य डालते हैं। इसी कारण इसका प्रभाव आज समाज के हर क्षेत्र में भी देखने को मिल रहा है और यही थोड़े से शब्दों के हेर-फेर के साथ समाज में सर्वोच्च स्तर तक पहुँच रहा है। इसी का परिणाम है कि टी.वी. पर दिन-रात समाचार चैनलों पर भी सबसे ज्यादा चर्चा अश्लीलता की घटनाओं पर ही चलती रहती है और घरों में परिवार सहित इन्हें देखना-सुनना भी असहज स्थिति उत्पन्न करताा है।

लेकिन क्या समाज में इस प्रकार की भाषा शैली का उपयोग मान्य होना चाहिए, कदापि नहीं। निजी जीवन में भी हमारी भाषा शैली व शब्दों का चयन ऐसा होना नहीं होना चाहिए जो सार्वजनिक मान दण्डों पर सर्वमान्य न हो। हमें निजी रूप से भी ऐसे शब्दों के प्रयोग से बचना चाहिए जिन्हें सार्वजनिक स्तर पर प्रयोग करने में संकोच हो, यही सभ्य मनुष्य का कर्तव्य है और ऐसी ही सभ्यता का परिचय हमें भी देना चाहिए। जब हम इस बात का प्रयास करते हैं कि हमारे द्वारा किसी भी प्रकार के गरिमाहीन शब्द का प्रयोग न हो तो हमारी भाषा प्रभावशाली होती चली जाती है और एक गुण विशेष को हम प्राप्त होते चले जाते हैं। हमारे प्रस्तुत किए गए विचारों का प्रभाव पड़ता है।

आइए, अब हम इसे आर्यों के परिप्रेक्ष्य में इसे देखते हैं। आर्यों के लिए सभी वो सिद्धान्त मान्य हैं जो सार्वजनिक, सार्वकालिक व सार्वभौम हों। इसीलिए आर्यों के लिए भी ऐसे शब्दों का चयन व ऐसी भाषा शैली का प्रयोग ही मान्य है जो सार्वजनिक हो, अर्थात् सभी स्थानों पर जिसे एक ही रूप में प्रयोग किया जा सके अर्थात् जिन्हें निजी व सार्वजनिक दोनों रूपों में उसी प्रकार प्रयोग किया जा सके। यही श्रेष्ठता है और यही हमें धारण करनी है। आज समाज में यदि देखा जाए तो आर्यों के द्वारा तो इस प्रकार का प्रयास किया जाता है कि अपशब्दों का प्रयोग न हो लेकिन समाज में अन्य वर्गों में यह उस अनुपात में दिखाई नहीं देता है। अत: हम आर्यों का और भी अधिक कर्तव्य बन जाता है कि हम समाज में ऐसा मानदण्ड स्थापित करें, जिससे औरों को भी शिष्टता के लिए विवश किया जा सके।

हमारी भाषा शैली व शब्दों के चयन प्रभाव डालता है। **आवश्यकता पड़ने पर कठोर शब्दों का प्रयोग तो किया जाना चाहिए लेकिन अशिष्ट नहीं क्योंकि कठोरता व अशिष्टता में बहुत अन्तर होता है** और आर्यों के लिए कठोरता तो स्वीकार्य है लेकिन अशिष्टता नहीं।

आइए, हम इस दिशा में भी और आगे बढ़ें और प्रयोग किए जाने वाले शब्दों को भी प्रभावी बनाने का प्रयास करें जिससे समाज में जो उच्च मान दण्ड ऋषियों के काल में पहले रहे हैं, उसी दिशा में हम आगे बढ़ सकें। समाज को दिशा देने का कार्य आर्य ही कर सकता है। आज आर्यों को समाज में मार्ग दर्शन का कार्य करना है और **मागदर्शक श्रेष्ठता को धारण करके ही बनना चाहिए,** नहीं तो वह समाज के पतन का कारण ही बनता है, जैसा कि आज-कल के मार्गदर्शकों (नेता, अभिनेता, धर्मशोषक आदि) के कारण समाज का पतन हो रहा है। तो समाज में जो यह परस्पर के संवाद में अशिष्टता व्यापक हो गई है और जिसके कारण से युवाओं की मानसिकता व विचारों पर भी प्रभाव पड़ता है उसको भी अपने आर्यत्व के माध्यम से दूर करें। स्वयं दृढ़ता से इसका पालन करें और अन्यों को भी इसके लिए प्रेरित करें, जिससे हम समाज को और अपने निकट लाने में सक्षम होंगे। इसके लिए एक और सिद्धान्त को मस्तिष्क में रखना आवश्यक है कि यदि भाषा शैली व शब्दों के चयन के साथ-साथ वह जितना सत्यता के निकट होगी उतनी ही प्रभावकारी होगी। अत: हमें सत्य के पालन का भी पूर्णत: ध्यान रखना चाहिए। हमारे विचारों, हमारे शब्दों का प्रभाव तभी अधिकतम और स्थिरता को प्राप्त कर सकेगा। जब हम सत्य अर्थात् करनी व कथनी एक हो, इस सिद्धान्त को भी उसके साथ सम्मिलित कर देंगे।

तो आइए! इस दिशा में आगे बढ़ें और श्रेष्ठ समाज (आर्यों का समाज) के निर्माण में अपनी सहभागिता को और प्रखरता के साथ निभाएं।

टिप्पणी- धर्मशोषक का अर्थ है-धर्म के अर्थ को बिना ठीक-ठीक जाने बाह्य कर्म-काण्डों को ही धर्म मानकर उनके नाम पर अंधविश्वास, पाखण्ड, आडम्बर आदि फैलाकर लोगों का शोषण करने वाला।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा की वेबसाईट पर उपलब्ध

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा की वेबसाईट www.aryanirmatrisabha.com व www.aryanirmatrisabha.org से भी पत्रिका को प्राप्त किया जा सकता है। पाठकगण पत्रिका को उपरोक्त साईट से डाऊनलोड कर पढ़ सकते हैं व सत्रों की सूचना भी प्राप्त की जा सकती है।

सूचना

सभी आर्यगणों से अनुरोध है कि राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा भिन्न-भिन्न स्थानों पर आयोजित होने वाले कार्यक्रमों सम्बन्धी सूचना पत्रिका के ई-मेल पते :- krinvantovishwaryam@gmail.com पर भेंजे साथ ही सम्बन्धित चित्र (फोटो) भी इसी पते पर भेज देंवे जिससे कि उनको समय पर पत्रिका में प्रकाशित किया जा सके

डार्विन के विकासवाद का सच

-सोनू आर्य (भास्कर), कैथल

मानव जीवन के कुछ बहुत ज्यादा जटिल विषयों में से एक विषय जीव के विकास का भी है। क्योंकि धरती पर एक बहुत बड़ा समुदाय आस्तिकों का है। जिनमें से कुछ (आर्य) ईश्वर के सही स्वरूप को जानते हैं। जबकि दूसरे समुदाय में वे लोग हैं जो नास्तिक हैं आधुनिक विज्ञान पढ़कर भौतिकवाद के व्यूह में फंसे हैं।

इनमें आस्तिकवादी ईश्वर से जीव की उत्पत्ति मानते हैं। जबकि नास्तिक वर्ग Accidental (दुर्घटना वश) जीवन की उत्पत्ति मानकर क्रम से अन्य जीवों का विकास एवं उत्पत्ति भी मानता है। नास्तिकों के पास मुख्य प्रमाण डार्विन महाशय का विकासवाद का सिद्धान्त है, अपने पक्ष की पुष्टि हेतु।

विकासवाद (परिचय)-विकासवाद का सिद्धान्त चार्ल्स डार्विन जो U.K. के रहने वाले थे, ने अपनी पुस्तक जीव का विकास (1859) में छपवाया। यह सिद्धान्त उन्होंने 1858 में प्रतिपादित किया था। डार्विन (ज्यादातर नास्तिक जो भौतिक विज्ञान में फंसे हैं।) का सिद्धान्त है कि जल में होने वाली विभिन्न दुर्घटनाओं के फलस्वरूप सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति होती है। उससे फिर बड़े जीव बनते चले जाते हैं। यह क्रम इस प्रकार बतलाया जाता है।

(1) प्रथम अमीबा आदि एक कोशिकीय जीव हुए। (2) फिर आदिम मत्स्य (3) फिर फेफड़े वाले मत्स्य (4) फिर सरीसृप (5) फिर स्तन्य जन्तु (6) फिर अण्डज स्तन्य (7) फिर पिण्डज स्तन्य (8) फिर जरायुज स्तन्य (9) फिर बन्दर, वनमानुष पतली नाक वाले। वनमानुषों में पहले पूंछ वाले कुक्कुटाकार, फिर बिना पूँछ वाले नाराकार, फिर इन्हीं नर-आकार वनमानुषों की किसी शाखा (लुप्त कड़ी) से जिसका अभी तक ज्ञान नहीं गूंगे मनुष्य, फिर अन्त में उन्हीं से बोलने वाले मनुष्य पैदा हुए। डार्विन ने उसके साथ-साथ मानसिक विकास की भी कल्पना की है। एक विकासवादी शास्त्रज्ञ के मतानुसार प्राणी के उद्भिजों से लेकर मनुष्य योनी तक पहुँचने में 67 लाख योनियाँ बीच में आती हैं। इन योनियों का विवरण देने में विशेषज्ञों ने भी अपनी असम्मति प्रकट की है। फिर थोड़े से मुट्ठी भर स्तन्य जन्तुओं का विवरण देकर जिसके भीतर भी लुप्त कड़ी अभी तक अज्ञात है। योनि विकास को प्रामाणिक समझना दुस्साहस मात्र ही है।

प्रो॰ ओविन ने लिखा है कि योनि विकास का उदाहरण कभी किसी मनुष्य के देखने में नहीं आया। वहीं प्रो॰ थॉमसन ने लिखा है कि हम नहीं जानते कि मनुष्य कैसे उत्पन्न हुआ। वह कहाँ से निकल आया। किन्तु यह बात खुले तौर पर स्वीकार की जाती है कि मनुष्य की उत्पत्ति जिस प्रकार विकासवाद में बतलाई जाती है, उसका कोई स्थिर स्थान विज्ञान की सीमा में नहीं है। प्रो॰ डौसन ने लिखा है कि प्राचीनतम अवशिष्ट् चिन्ह जो मनुच्यों में पाए जाते थे। उनसे योनि विकास की प्राप्ति नहीं होती। विकासवाद के विरुद्ध एक तर्क यह भी उठता है कि विभिन्न जीवों के विकास से मनुष्य बना है। तो हम पूछते हैं कि आज मनुष्य विकास करके कुछ और जीव क्यों नहीं बनता। इसलिए नहीं बनता क्योंकि विकासवाद का यह सिद्धान्त सर्वथा मिथ्या एवं निराधार है।

इसके अतिरिक्त एक सार्वत्रिक नियम देखने में आता है कि जो चीज उत्पन्न होती है वह नष्ट हो जाती है। जो चीज बढ़ती है अन्त में घटने लग जाती है। मनुष्य उत्पन्न होकर युवा होता है, फिर बूढ़ा होकर मरता भी है। वृक्षों की भी यही अवस्था है। ये कहीं भी नहीं देखा कि कोई चीज बढ़ती ही चली जाए और घटे नहीं। विकास के साथ ह्रास अनिवार्य है। परन्तु डार्विन का विकासवाद एक पहिए की गाड़ी है। ह्रासशून्य विकास है, इसलिए अस्वीकार्य है।

वर्तमान डी.एन.ए. सिद्धान्त के आने के बाद विकासवाद के समर्थकों की संख्या नित्यप्रति घटती ही जा रही है। क्योंकि डी.एन.ए. जाँच से पता चलता है कि जैसे-डी.एन.ए. हमारे पूर्वजों का था वैसा ही हमारा भी है तो बीच में किसी अन्य योनि के आने की बात तो स्वत: खण्डित हो जाती है।

एक तथ्य यह भी है कि जब लगभग 280 दिन में रज एवं वीर्य के मेल से मनुष्य बन जाता है, तब उसे लाखों वर्षों में बना हुआ बताना ईश्वरीय शक्ति का अपमान मात्र ही है।

यहाँ नास्तिकों हेतु एक बात विशिष्ट यह है कि विकासवाद के अविष्कारकों में मुख्य चार्ल्स डार्विन एवं अन्य अनेक विद्वान् ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते थे। अत: विकासवाद को आगे रखकर वर्तमान में ईश्वरीय सत्ता को नकारना किसी को भी उचित नहीं है।

नोट:- विकासवाद का विशेष खण्डन देखने हेतु महात्मा नारायण स्वामी जी की आत्म दर्शन, वेद रहस्य एवं सोनू आर्य कृत सार्थक चिन्तन का व सृष्टि उत्पत्ति कैसे की है इस विषय को जानने हेतु महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश पाठकगण अवश्य पढ़ें।

॥ शान्तिपाठ ॥

ओं द्यौ: शान्तिरन्तरिक्ष॰ शान्ति: पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्ति:। वनस्पतय: शान्तिर्विश्वेदेवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्ति: सर्व॰ शान्ति: शान्तिरेव शान्ति: सा मा शान्तिरेधि।।ओं शान्ति: शान्ति: शान्ति: ।।

॥ शान्तिगीत ॥

शान्ति करें प्रभु हम त्रिभुवन में,
शान्ति करें प्रकाश सृजक में,
अन्तरिक्ष में और भूमि में।
शान्ति करें प्रभु.....
जल में शान्ति करें प्राणों में,
सोमादि औषधी, वनस्पति में।
शान्ति करें प्रभु.....
शान्ति देव सब वेद पठन में,
अखिल वस्तु के हो कण-कण में,
शान्ति बढ़े प्रभु हम आर्यों में,
शान्ति करें प्रभु हम त्रिभुवन में।

उत्तम क्वालिटी के ओ३म् ध्वज व आर्यावर्त्त हवन सामग्री की प्राप्ति हेतु सम्पर्क करें-

आर्य मार्किट, शिवाजी कॉलोनी, रोहतक

-सम्पर्क सूत्र- 9466904890

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	2 दिसम्बर	दिन-सोमवार	मास-मार्गशीर्ष	ऋतु-हेमन्त	नक्षत्र-अनुराधा
पूर्णिमा	17 दिसम्बर	दिन-मंगलवार	मास-मार्गशीर्ष	ऋतु-हेमन्त	नक्षत्र-मृगशीष
अमावस्या	1 जनवरी	दिन-बुधवार	मास-पौष	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-मूल
पूर्णिमा	16 जनवरी	दिन-वृस्पतिवार	मास-पौष	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-पुनर्वसु

लेखमाला–4

ईशोपनिषद् की व्याख्या

–प० गुरुदत्त विद्यार्थी, एम.ए. द्वारा व्याख्यित

उसके प्रति अपनी कृतज्ञता और परतन्त्रता को स्वीकार करते हुए हमारी आत्माएं पूजा भाव से उसकी ओर जाती हैं जो कि **"नित्य, सनातन, विज्ञ आत्मा, मन से भी बढ़कर शक्तिशाली है।"** यह सत्य है कि **"भौतिक इन्द्रियां उसका अनुभव नहीं कर सकती"** परन्तु हृदय दूरदृष्टि रूपी सुन्दर ज्ञान के लिए कृतज्ञ होकर पूजा भाव से झुक जाता है। गँध, सौरभ, वर्ण, शब्द और अन्य बाह्य संस्कार बाहरी जगत् की ओर झुके हुए मनुष्य को प्रभावित करके चाहे उसे इन सब का स्रोत भुला दें, परन्तु वह मनुष्य जिसकी आत्मा में सौन्दर्य्य खिला हुआ है और विनीत पूजा के सुगंधित धूप के साथ कृतज्ञता का भाव उठता है, वह इन वस्तुओं को चीर कर आगे देखने से नहीं रूक सकता। वह **"अपनी इन्द्रियों को उनके स्वाभाविक मार्ग से हटा लेता है और परमात्मा की सब कहीं विद्यमानता अनुभव है।"** संसार के भ्रामक दृश्य-चमत्कार अब उसे धोखा नहीं देते। इन्द्रियभोग्य प्रलोभन और बाह्य आडम्बर उसकी विस्तृत और विकसित दृष्टि में धूलि नहीं डाल सकते। बाह्य कलह से बहुत दूर, और अपने शान्त मन के अन्दर, वह उस परमात्मा का अनुभव करता है जो **"सब को हिलाता है परन्तु आप नहीं हिलता।"** हां, संसार में लिप्त, विकारों के वशीभूत, और अविद्या के जाल में फँसे हुए मनुष्यों के लिए वह चाहे दूर हो, **"परन्तु ज्ञानियों के लिए वह निकट है,"** क्योंकि **"वह सब के अन्दर और बाहर व्यापक है।"** जिस मन ने इस प्रकार कृतज्ञता का भाव ग्रहण कर लिया उसके लिए विरोध, असंतोष, और संक्षोभ कोई नहीं रहता। क्योंकि मत्सरता, घृणा, ईर्ष्या, तिरस्कार और अन्य विरोध द्वंद्वभाव के भिन्न-भिन्न रूप ही तो हैं। जब मनुष्य इस बात का अनुभव कर ले कि प्रत्येक आत्मा एक ही परमेश्वर के सजातीय प्रभावों से चेष्टा करता है, इस विस्तृत ब्रह्माण्ड का प्रत्येक परमाणु एक ही श्वास से जीवन पाता और प्रत्येक व्यक्तिगत हृदय अभिन्न आकाश-जवाला से प्रदीप्त होता है तो फिर द्वंद्वभाव कैसे रह सकता है? समस्त प्रभेद मिट जाते हैं। मनुष्य जाति एक परिवार हो जाती है। सब भाई हो जाते हैं। फिर वैर, कोई स्पर्धा, कोई मत्सरता, और कोई विरोध रह नहीं जाता। ऐसी मानसिक उन्नति प्राप्त कर लेने पर मनुष्य सहर्ष **''सब भूतों को परमेश्वर के अन्दर स्थित और परमेश्वर को सब भूतों में व्यापक''** समझने लगता है, और वह **''किसी भी जीव को तिरस्कार की दृष्टि से नहीं देख सकता''।** न ही **"मोह और शोक उसे पकड़ सकते हैं"** क्योंकि वह अपनी बुद्धि द्वारा **''सब भूतों में एक आत्मा को निवास करते देखता है।''**

जिस मनुष्य का अनुभव इस ब्रह्माण्ड की अन्तरात्मा तक पहुँचता है उसके प्रेरक पूजा, प्रशंसा और प्रेम के भाव ही होते हैं। जब मनुष्य इस बात पर विचार करता है कि अपने से श्रेष्ठ व्यक्तियों के सामने, (जो यद्यपि श्रेष्ठ हैं पर भ्रान्त और परिमित हैं, और दु:ख, अविद्या, निष्फलता, निर्बलता और इनके परिणामों के अधीन हैं) उसके अन्दर कैसा पूजा का भाव उत्पन्न हो जाता है तो उसे अपने अनदर उसके लिए जो **''सब भूतों पर छाया हुआ है जो सर्वथा आत्मा ही आत्मा है, जिसका कोई आकार नहीं; जिसका कोई अनुभव या इन्द्रियविन्यास के योग्य सूक्ष्म या स्थूल शरीर नहीं; जो बुद्धि का राजा, स्वयंभू, शुद्ध, पूर्ण, सर्वज्ञ और सर्वव्यापक है,''**–दयालु पिता **''जो सनातन काल से भूतों के लिए उनके अपने अपने काम नियत करता आया है,''** अधिक सम्मान, प्रशंसा, और पूजा का भाव उत्पन्न हुआ देखकर आश्चर्य नहीं होता।

धन्य हैं वे लोग जिन्हें इस परम देव, इस सर्वव्यापक परमेश्वर का ज्ञान प्राप्त है। उन लोगों के हृदय-मंदिर आनंद से परिपूर्ण हैं जो इस सत्य स्वरूप की विद्यमानता का अनुभव करते हैं। उनके लिए जीवन एक भारी विलासिता, स्थिर सुख, और सनातन उपभोग और वृद्धि है। उन्होंने मृत्यु को जीतकर कुचल डाला है। परन्तु वे लोग अति दु:खी हैं जो के चारों ओर से अविद्या के जाल में फँसे हुए हैं। इस ब्राह्मण्ड के विद्याता को न जानने वाला अज्ञानी क्या उन्नति कर सकता है? देखो यह कैसा विध्वंस उत्पन्न करता है। कि जब मनुष्य को एक बार अपने अज्ञान का पता लग जाता है तो फिर वह उसे सहन नहीं कर सकता। अतएव अज्ञान का बोध होते ही ज्ञान का आरम्भ हो जाता है। बुद्धिमान सुकरात ने सर्वथा ठीक कहा था कि "मैं केवल इतना ही जानता हूँ कि मैं कुछ नहीं जानता।" सारा विरोध अविद्या से ही उत्पन्न होता है। देखिए इसका कैसा भीषण रूप है। अमर पंतञ्जलि मुनि कहते हैं-**''अनित्याशुचिदु:खानात्मसु नित्य शुचिसुखात्म ख्यातिरविद्या''** अज्ञान की भयानक शक्ति चौगुनी है। एक तो इससे दीन अज्ञानी मनुष्य यह समझने लगता है कि यह दृश्य, श्राव्य, ब्रह्माण्ड, जिसका प्रत्येक तत्त्व विनाशशील है, सदा बना रहेगा, और कि यह स्थूल भौतिक शरीर, यह नश्वर काया, ही एक ऐसी वस्तु है जो मृत्यु के अनन्तर रहती है। दूसरे इससे उसके मन में यह भयानक और मिथ्या प्रत्यय बैठ जाता है कि नारी-सौन्दर्य्य, जिसे के कई तत्त्वदर्शी मूक वंचक के नाम से पुकारते हैं, असत्य का व्यापारी, चोरी, और ऐसी ही और बातें जिनका कि सार ही मलिनता और गन्दगी है, शुद्ध और वाञ्छनीय उपभोग हैं। तीसरे यह उसे दु:ख और पीड़ा के उस सागर में विकार और विषयासक्ति के उस समुद्र में डुबा देता है जिनकी तृप्ति को ही अंधा अज्ञानी मनुष्य सुख और आनन्द की प्राप्ति समझता है। चौथे, अविद्या में फंसे हुए मनुष्य को आत्मा के स्वरूप का कुछ भी पता नहीं होता। वह इस भौतिक गुरु, और दृश्य वस्तु को ही आत्मा समझता है। यह है अविद्या का स्वरूप; इसलिए यदि इसे इन्द्रियों का जीवन कहा जाय तो झूठ न होगा, क्योंकि इस इन्द्रिय-सुख से बढ़कर और कोई जीवन, और इन्द्रियगोचर संसार से परे और कोई संसार नहीं मानता। निस्सन्देह **"वे लोग अतिदु:खी हैं जो अविद्या की उपासना करते हैं, परन्तु उन से भी बढ़कर दु:खी वे हैं जो विद्या पर गर्व करते हैं।"** क्योंकि वह बुद्धिमान नहीं जो अधिक जानने का गर्व करता है, जो अपने मस्तिष्क में पुस्तकों का एक ढेर; या अपनी समृति में शब्दों और वाक्यों का एक समूह; या अपनी रसना में विद्रूपात्मक शब्द-संग्रह की बौछाड़, या अपने प्रकीर्ण भण्डार में, जिसे मन कहते हैं, उस द्रव्य का एक याचित शास्त्रागार (जो मानसिक युद्ध में, जिसे सामान्यत: विवाद कहते हैं, विजय प्राप्ति के लिए अत्युपयोगी है) उठाने का दावा करता है। प्रत्युत वही मनुष्य बुद्धिमान है जिस के भाव, विचार, जीवन, और कर्म्म अच्छे हैं। ज्ञान और अविद्या का भेद विपर्ययों का भेद है। ज्ञान नित्य जीवन, सनातन सुख, और सदैव की शान्ति है। अविद्या इस संसार का सारा दु:ख सारा पाप, सारी व्याधि, और सारा अनिष्ट है। ज्ञान और अविद्या में जितना भेद है उस से बढ़कर और भेद संसार में सम्भव नहीं। जिन लोगों ने यह घोषणा की थी कि **"अविद्या जो कि इन्द्रियों का जीवन है, एक परिणाम उत्पन्न करती है, और विद्या का, जो कि आत्मा का जीवन है, ठीक उसके विपरीत परिणाम होता है,"** वे भ्रान्त न थे।

परन्तु वह बुद्धिमान् मनुष्य धन्य है जो बुराई से भलाई और विष से अमृत निकालता है। ज्ञानी पुरुष स्वयम् इन्द्रियों से पवित्र काम लेता है। यह काम कर्म्मोपासना, अर्थात् वह सुव्यवस्थित, और पुण्यशीलता के अनुसार मर्यादित धार्मिक जीवन है जो बंधन, पाप, दु:ख और मृत्यु से मुक्ति दिलाता है। हाँ, ज्ञानी पुरुष इन्द्रियों से आज्ञाकारिता, विकारों से पुण्यशीलता, मनोभावों से उन्नति, अविद्या से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। इसका फल चिरस्थायी परमानन्द और अमरत्व की प्राप्ति होता है। ऐसे ही पुरुष के विषय में कहा गया है कि **"जो मनुष्य दोनों का अनुभव कर लेता है, वह इन्द्रियों के जीवन के कारण शारीरिक मृत्यु का उल्लघ्ङन कर के आत्मा के जीवन के द्वारा अमरत्व को प्राप्त हो जाता है।"**

–क्रमश:

लेखमाला–8

डेरावाद : सैद्धान्तिक विश्लेषण

-दयानन्द आर्य, बिठमढ़ा, हिसार

प्रश्न : 52 संसार को सुधारने के प्रयास, जो समयानुसार नहीं हैं, सतगुरु उनमें व्यर्थ समय नहीं गंवाते। उनका उद्देश्य मात्र मुक्ति (मोक्ष) दिलाना है, देना है। पृ. 182

टिप्पणी : सिख सतगुरुओं ने मुसलमानों के खिलाफ संघर्षों में जो असफल थे अर्थात् समयानुकूल नहीं थे। क्या व्यर्थ समय गंवाया? फिर भी आप उनको पूर्ण सन्त कहते? इसी प्रकार "डेरा सिरसा" के सफाई अभियानों, रक्त-दान आदि प्रकल्यों के बारे में क्या कहोगे? डेरा ब्यास ऐसे-2 कार्य नहीं करता। ईश्वर के इन दोनों तथाकथित प्रतिनिधियों के लिए ये समयानुकूल क्यों नहीं? अर्थात् दोनों में से कोई एक सच्चा सतगुरू नहीं है। और जो सच्चा है वह मनुष्यता धर्म, सतगुरू-धर्म का पालन करते हुए दूसरे झूठे का खण्डन, विरोध क्यों नहीं करता? मानवहित न चाहने से वह भी झूठा व पाखण्डी ही क्यों न कहा जाए? और यह भी कि साधारण मनुष्य बिना इनके शास्त्रार्थ के सत्य-असत्य का निर्णय कैसे करें? और शास्त्रार्थ से इनका भागना-बचना, जरा विचारिये क्या इनके झूठे मार्ग का, इनकी आधारहीनता का, स्वार्थ का ही प्रमाण नहीं कहा जाए?

प्रश्न : 53 वेद-अनुयायी, ब्रह्मवादियों (थियोसोफियों) का यह विश्वास कि ब्रह्म ही परमेश्वर है, गलत है। पृ. 185

टिप्पणी : जब ब्रह्म शब्द का मूल वेद या संस्कृत भाषा है तो उसका अर्थ भी वहीं से ग्रहण करना होगा। संस्कृत और वेद से अनजान-अनपढ़ कोई व्यक्ति उसका अर्थ-नियोजन कैसे कर सकता है? और सब आर्ष ग्रन्थों में इसका अर्थ सर्वज्ञ, चेतन, सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक, निराकार, सृष्टिकर्ता परमेश्वर के रूप में है। क्या इन गुणों से युक्त सत्ता से बड़ी भी कोई सत्ता हो सकती है? सबसे बड़ा होने से, निरन्तर-व्यापक होने से परमेश्वर का ही नाम 'ब्रह्म' है। किसी अन्य निम्न-गुणीय सत्ता मात्र के लिए इस शब्द का प्रयोग आपके अज्ञान, अहंकार, हठ व स्वार्थ का ही द्योतक है।

प्रश्न : 54 एकग्रता (इन्द्रियों के स्थूल जगत् को भूल जाना) ही किसी उपलब्धि का एकमात्र जरिया है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि इन्सान क्या करना चाहता है, लेकिन सफलता प्राप्त करने का यही एक साधन है। ध्यान की एकाग्रता वह कुंजी है जो विवेक, सत्य तथा अध्यात्म के भण्डार खोल सकती है। पृ. 209

टिप्पणी : वास्तव में यही एकमात्र सत्य-ज्ञान सिद्धान्त है जो ये थे डेरे अपने अनुयायियों को देते हैं; परन्तु इस-ज्ञान का मूल पतञ्जलि के "योग-शास्त्र" अष्टाँग योग में है। सत्य तो यही है कि इन डेरों में जो-जो भी प्रत्यक्ष लाभादि के दावे या बातें की जाती हैं, वह सब इसी एकाग्रता का परिणाम होता है न कि किसी तथाकथित गुरु-कृपा का। काश! आप लोग स्वार्थ, पूर्वाग्रह, हठ छोड़ पूरा ही अष्टांग-योग अपना लेते तो मानवता का और अधिक भला होता। फिर लोगों को नैतिक-कहानियाँ-कथाएँ मात्र सुनने को बार-बार डेरों के चक्र न लगाने पड़ते; यम नियम अभ्यास ही पर्याप्त होता। देश का बहुत सा धन, समय बच जाता और साथ में ईश्वर, वेद व पतञ्जलि ऋषि के प्रति कृत्घनता-पाप से भी बच जाते।

और जब आपने स्वीकार कर लिया है कि ध्यान की एकाग्रता ही एकमात्र कूंजी है, फिर भी आप तथाकथित सतगुरु की कृपा, मेहर, चमत्कार, वह ईश्वर का साकार रूप, प्रतिनिधि आदि दिव्यता की बातें डेरों व गुरूओं से क्यों जोड़ते हो? अरे स्वार्थ छोड़ो! सत्य को स्वीकार कर अविद्या-पाप से बचो औरों को बचाओ।

प्रश्न :55 जिस व्यक्ति की सूक्ष्म दृष्टि विकसित है उसे वास्तविकता का ज्ञान होता है। परन्तु जिसकी सूक्ष्म दृष्टि विकसित नहीं है वह सहज ही विश्वास करने लगता है कि ईश्वर के साथ उसकी बातचीत हो रही है, जबकि वास्तव में वह अपने मन की धीमी फुसफुसाहट के सिवा और कुछ नहीं सुनता जो उसके अवचेतन मन से आ रही होती है। वह खुद अपने झाँसे का शिकार हो जाता है। कई बार तो यह भी कहता कि उसे ईश्वर (ईसा आदि) ने कुछ संदेश या निर्देश दिया है। पृ 210

टिप्पणी : जब आप ये आपतियाँ ईसादि के शिष्यों के दावों पर लगाते हैं तो क्या ये सब तथाकथित सतगुरुओं के व इनके शिष्यों पर भी सटीकता से लागू नहीं होती हैं? क्या डेरों के शिष्य सूक्ष्म दृष्टि से विकसित होते हैं? क्या यह सत्य नहीं है कि समाज के भोले-भाले, अज्ञानी लोग ही अधिक संख्या में इनसे जुड़े हुए हैं? अरे! जब ये गुरु अपने शिष्यों को 'नूरी रूप' शब्द-धुन गुजरी महान् आत्माओं से जोड़ने की बात कहते हैं तो भोले-लोगों को अवचेतन-मन की इन्हीं वृत्तियों का प्रयोग कर बहकाते-भ्रमाते हैं।

प्रश्न : 56 सतगुरु के शिष्य को अपने मन की गतिविधियों (भटकावादि) पर चौकसी रखनी पड़ती है। जब वह ध्यान करता (आन्तरिक लोकों में कदम रखता) है। केवल सतगुरु का शिष्य ही मन के हर प्रकार के धोखे से बच सकता है। पृ. 211

टिप्पणी : यह चौकसी यम-नियमादि अभ्यास से मन, इन्द्रियों को इनकी वृत्तियों से हटाना ही तो है। वास्तव में, प्राकारान्तर से, आपने भी यम-नियमादि की महती आवश्यकता को स्वीकार कर लिया है। अब विवेक से यह निर्णय कीजिए कि मन वृतियों पर विजय हेतु यम-नियमादि अभ्यास रूपी साधन ज्यादा व्यावहारिक, वैज्ञानिक हैं या केवल सतगुरु का 'नाम-दान' लेना, गुरु-कृपा का होना मात्र ही पर्याप्त होगा? जो 'नाम-दान' मात्र पर्याप्त होता तो इनके सब शिष्य मन के भटकावों से दूर होते। जो नहीं, तो आपका यह कथन झूठा है कि केवल सतगुरु के शिष्य ही इनसे बच सकते हैं।

प्रश्न : 57 उस परमसत्ता ने केवल दो मार्ग नियत किये हैं–पलहे मार्ग पर चल रहे लोग सतगुरू की जरूरत नहीं समझते। यह निजी प्रयास का मार्ग है। दूसरे मार्ग में सतगुरु आत्मा को मन-माया के जगत् से मुक्ति दिलाकर उसके असली घर यानि परमधाम ले जाते हैं। पृ. 212

टिप्पणी : जब प्रथम मार्ग भी परमसत्ता ने नियत किया है और आप कहते हैं कि यह अधूरा या असत्य है तो क्या आप ईश्वर का अपमान नहीं कर रहे हैं? क्या इससे परमेश्वर की सर्वज्ञता, न्यायकारिता, प्रेमी-दयालु स्वभाव-गुण पर ही प्रश्न-चिन्ह नहीं लग जाता है जो उसने अधूरा सिद्धान्त देकर लोगों को भ्रमाया-भटकाया?

और जो यह निजी प्रयत्न का मार्ग है तो क्या सतगुरु मार्ग में निजी प्रयत्न की कोई जरूरत नहीं? जो नहीं, तो क्या इससे परमेश्वर को अनजाने में ही आप ने अन्यायी नहीं ठहरा दिया कि बिना प्रयत्न के उसने किसी को मोक्ष दे दिया? तो फिर आप ने प्रश्न आठादि में क्यों कहा कि शिष्य को खुद योग्य होना पड़ता है। मन की वृत्तियों को जीतना पड़ता है (प्रश्न 56)। एक तरफ तो भिन्न-भिन्न शर्तों-रूपी दायित्व-योग्यताएं शिष्यों के लिए आवश्यक बता देते; दूसरी तरफ कहते सब गुरु कृपा है।

विवेक से निर्णय करते जाईये कि क्या कोई पूर्ण ज्ञानी, परमसत्ता का तथाकथित प्रतिनिधि ऐसी अविद्यापूर्ण, द्वेष-स्वार्थ की बातें कह सकता है ? अर्थात् कभी नहीं। ऐसी बातें कहने वाले तो झूठे ही कह जा सकते है, सन्त कदापि नहीं।

प्रश्न : 58 उस स्तर तक पहुँचना जहाँ हम उस ईश्वर को देख या सुन पाएंगे, यह अवस्था एक सच्चा सन्त या सतगुरू ही प्राप्त कर सकता है, कोई आम आदमी नहीं। पृ. 213

टिप्पणी : जब आप स्वयं कहते हो कि हर मनुष्य सन्त बनने की योग्यता रखता है, पृ. 223 अर्थात् हर मनुष्य यह अवस्था प्राप्त कर सकता है, तो आप अपनी बात का स्वयं खण्डन कर देते हो। और क्या वह ईश्वर साकार है जो दिखता और बोलता भी है?....और जो केवल सतगुरू ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है तो क्यों भोले लोगों को "निश्चित-मोक्ष" के सपने दिखा भ्रमाते-फंसाते हो? अब इनके शिष्य-बन्धु विवेक से निर्णय करें कि क्या कोई "सर्वज्ञ" सच्चा, ईमानदार व्यक्ति या गुरु ऐसी-ऐसी परस्पर विरोधाभासी बातें कर सकता है?

क्रमशः

द्विदिवसीय आर्य/आर्या प्रशिक्षण के बाद सत्रार्थियों के अनुभव

आर्य प्रवक्ता महोदय श्री हनुमत् प्रसाद उपाध्याय द्वारा आर्य से सम्बंधित जो भी संवाद प्रश्न, सवाल किये गये जिससे मैं अन्यधिक प्रभावित हुआ तथा साथ ही साथ मुझे अपने राष्ट्र, आर्य व आर्यावर्त होने की विस्तृत विवरण की जानकरी प्राप्त हुई। तथा मैं अपने युवा मित्र वर्ग को आर्य का विस्तार पूर्वक वर्णन करूँगा। तथा अपने राष्ट्र के प्रति सदैव समर्पित रहूँगा।

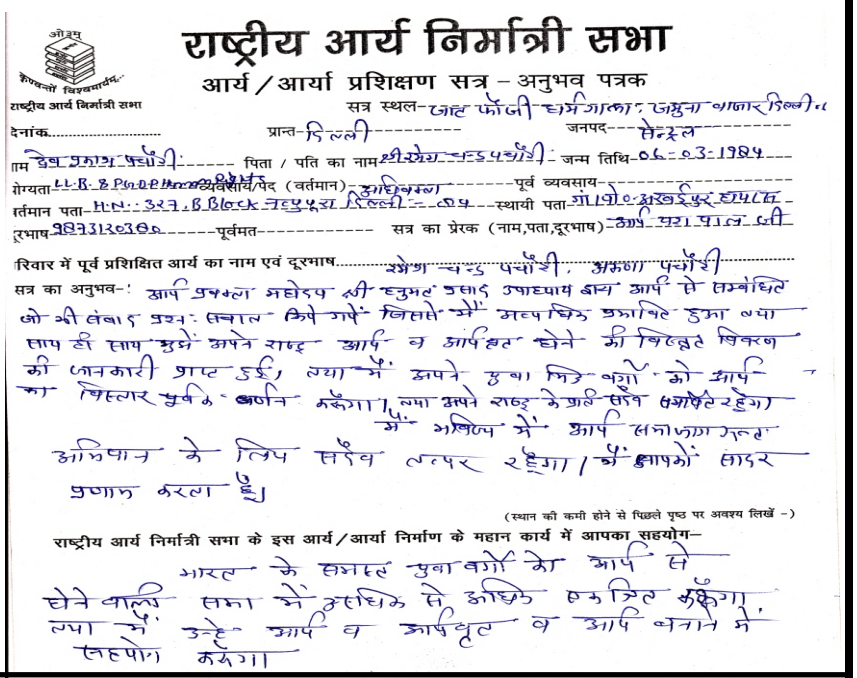

मैं भविष्य में आर्य समाज जागरण अभियान के लिए सदैव तत्पर रहूँगा। मैं आपको सादर प्रणाम करता हूँ।

भारत के समस्त युवा वर्ग को आर्य की होने वाली सभा में अधिक से अधिक एकत्रित करुँगा, तथा मैं उन्हें आर्य व आर्यावर्त्त बनाने में सहयोग करूँगा।

वेदप्रकाश पचौरी, आयु-29 वर्ष, एल.एल.बी.
एडवोकेट, निवास- नत्थुपुरा, दिल्ली-84

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा
आर्य/आर्या प्रशिक्षण सत्र - अनुभव पत्रक

आज से समाज में आर्य की परिभाषा को समझाउँगा आर्य समाज पर विश्वास करूँगा। आज से आर्य की जानकारी अपने घर में, परिवार में, समाज में, जिला में, प्रदेश में और पूरा देश पर करूँगा। समाज में किसी की प्रकार के पाखण्ड एवं मूर्ति पूजा पर विश्वास नहीं करूँगा। गुरुकुल एवं आर्य का हर सम्भव प्रचार प्रसार करूँगा, जय आर्य।

आज से तन मन धन से आर्य निर्माण का सहयोग करूँगा।

पुरुषोतम पौडियाल, आयु-32 वर्ष, बी.ए.
निवास- भजनपुरा, दिल्ली

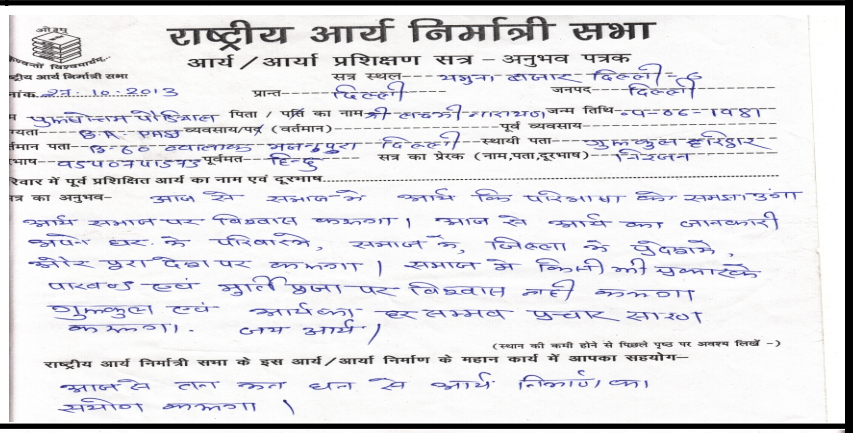

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा
आर्य/आर्या प्रशिक्षण सत्र - अनुभव पत्रक

सत्र में 12-10-13 से 13-10-13 की शाम तक अथक परिश्रम करके हमलोगों को ईश्वर, बुद्धि, विद्या व अविद्या में भेद वेद मत के अनुसार प्रकाश डाला गया तथा ईश्वर को प्राप्त करने के लिए आष्टांग योग महर्षि पातंजलि के अनुसार सिखाया गया। पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय चिन्तन आदि विषयों पर विस्तारपूर्वक वेदानुकूल समझाया गया।

ऐसे प्रयास से राष्ट्र को आर्यत्व के आधार पर आर्यावर्त बनाया जा सकता है। आचार्य प्रवर-इस महान प्रयास के लिए आपको साधुवाद।

रमेशचन्द्र आर्य, आयु-72 वर्ष, स्नातक
अध्यापन, निवास- घुराई, कल्हौर, मैनपुरी

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा
आर्य/आर्या प्रशिक्षण सत्र - अनुभव पत्रक

आगामी आर्य प्रशिक्षण सत्रों की सूचना

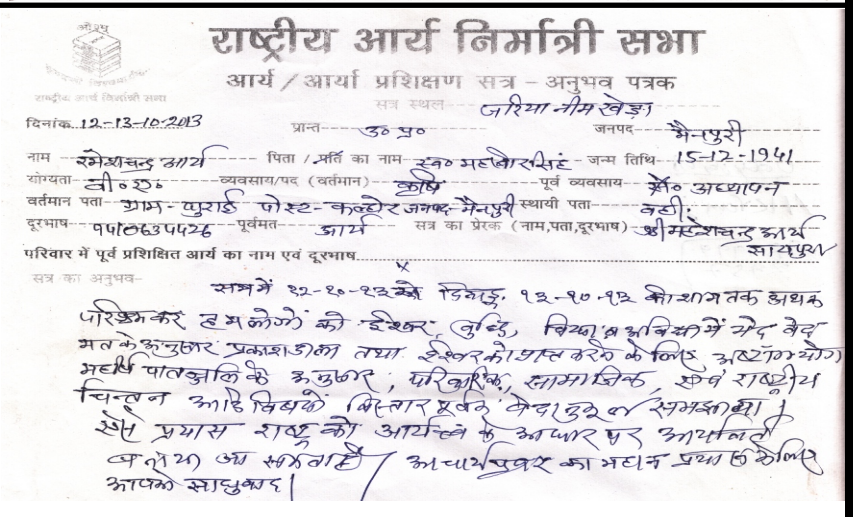

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आर्य विद्या देने हेतू द्विदिवसीय सत्रों का आयोजन प्रतिमाह अनेक स्थानों पर हो रहा है। सत्रों की जानकारी समय पर सभी को मिल सके इसके लिए आगामी सत्रों की सूचना, जो अब तक निश्चित हो चुके हैं, दी जा रही है। इसके अलावा भी कई सत्र जो बाद में निश्चित होते हैं उन की सूचना एस.एम.एस. द्वारा आर्यों को भेज दी जाती है। सभी आर्यों से यह भी निवेदन है कि सत्रों की तिथियाँ कम से कम एक माह पहले निर्धारित करके सभा के महासचिव आचार्य जितेन्द्र जी से अनुमति ले लें, जिससे उनकी सूचना भी पत्रिका में दी जा सके।

आगामी आर्य प्रशिक्षण सत्र

क्र.सं.	स्थान	दिनांक	सम्पर्क	दूरभाष
1.	आर्यसमाज, श्योपुर, मध्य प्रदेश	14-15 दिसम्बर	आर्य जयदेव	8817117556
2.	एम.एस. मेमोरियल पब्लिक स्कूल, लक्ष्मीपार्क, नांगलोई, दिल्ली	14-15 दिसम्बर	आर्य पवन	9911913969
3.	भारतीय शिशु ज्ञान मंदिर, चांदला, छत्तरपुर, मध्य प्रदेश	14-15 दिसम्बर	आर्य बाबूलाल	8373943352
4.	रा.व.मा. विद्यालय, पीलूखेड़ा, जीन्द, हरियाणा	14-15 दिसम्बर	आर्य मेधाव्रत	9813228255
5.	धनीराम मेमोरियल लाईब्रेरी,गांव-कतलुपुर, सोनिपत, हरियाणा	21-22 दिसम्बर	आर्य विकाश	9050692003
6.	आर्यसमाज, आरा (भोजपुर) बिहार	21-22 दिसम्बर	आर्य कामता प्रसाद	9852153330
7.	गांव-घोघडिया, जीन्द हरियाणा	21-22 दिसम्बर	आर्य कुलबीर	9416460416

आर.एन.आई-संख्या : DELHIN/2007/23260
पोस्टल रजि. संख्या : DL (N) 06/213/11-13

आर्य निर्माण राष्ट्र निर्माण

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आयोजित ऋषि बलिदान दिवस समारोह (3 नवम्बर 2013) तहसील ग्राउण्ड, बवाना, दिल्ली

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् पत्रिका की सदस्यता हेतु 100 रुपए द्विवार्षिक शुल्क मनीआर्डर से प्रांतीय कार्यालय के पते पर भेजें, स्थानीय राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा के सदस्यों के पास भी शुल्क जमा कर रसीद ले सकते हैं। पूरा पता अवश्य लिखें, न पहुंचने पर दूरभाष से कार्यालय में सूचना दें। जिन सदस्यों की सदस्यता एक वर्ष से अधिक पुरानी है वे अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करवा लेवें।

स्वामी व प्रकाशक आचार्य परमदेव मीमांसक एवं सम्पादक आचार्य हनुमत् प्रसाद द्वारा सांगोपांगवेद विद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल, टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81 से प्रकाशित एवं सुदर्शन प्रैस, दिल्ली-87 से मुद्रित।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् - समाचार पत्र मे छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक का पूर्णतया सहमत होना आवश्यक नहीं है। क्योंकि अनवधानतावश त्रुटि एवं मतभिन्न होना सम्भव है। सभी न्यायिक विवाद दिल्ली में निपटाये जाएंगे।